अनुबोधन, खण्ड 2, अंक 2, अप्रैल–जून 2026, पृष्ठ 62–66
जर्नल वेबसाइटः
https://anubodhan.org
ISSN: 3049-4184 (प्रिन्ट) 3108-1185 (ऑनलाइन)
https://doi.org/10.65885/anubodhan.v2n2.2026.061

जीवन का समग्र बोध : जे. कृष्णमूर्ति की अंतर्दृष्टि के आलोक में

डॉ० हरि नारायण [1]

प्राप्तिः 19 मई 2026 / संशोधित: 14 जून 2026 / स्वीकृतः 14 जून 2026 / प्रकाशित ऑनलाइन: 16 जून 2026
Copyright © 2026 Author(s). Published by Siri Research Foundation. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution International License (CC BY 4.0).

सारांश

जे. कृष्णमूर्ति का दर्शन आधुनिक युग में मानव-चेतना, आत्मबोध और जीवन की समग्रता को समझने की एक विशिष्ट अंतर्दृष्टि प्रस्तुत करता है। उनका चिंतन किसी परंपरागत दार्शनिक प्रणाली, धार्मिक संप्रदाय अथवा वैचारिक अनुशासन से बँधा हुआ नहीं है, बल्कि प्रत्यक्ष अनुभव, जागरूकता और आत्म-अवलोकन पर आधारित है। "जीवन का समग्र बोध" उनके दर्शन का केंद्रीय तत्व है, जिसके माध्यम से वे मनुष्य को विभाजित चेतना से मुक्त होकर जीवन को उसकी पूर्णता में देखने की प्रेरणा देते हैं। कृष्णमूर्ति के अनुसार मनुष्य का जीवन भय, स्मृति, तुलना, प्रतिस्पर्धा और मनोवैज्ञानिक संघर्षों के कारण खंडित हो गया है। यह विभाजन व्यक्ति को स्वयं से, समाज से और प्रकृति से अलगाव की स्थिति में ले जाता है। कृष्णमूर्ति मानते हैं कि जीवन को समझने के लिए किसी बाह्य प्राधिकार, गुरु, धर्मग्रंथ अथवा विचारधारा पर निर्भर रहना आवश्यक नहीं है। इस निर्भरता से जीवन का समग्र बोध संभव नहीं है। उनके अनुसार सत्य किसी निश्चित पद्धति या अनुकरण से प्राप्त नहीं किया जा सकता, बल्कि वह तभी संभव है जब व्यक्ति अपने भीतर की गतिविधियों को निष्पक्ष रूप से अर्थात चुनाव रहित होकर देख सके। यह 'देखना' (चुनावरहित सजगता) ही अंतर्दृष्टि (Insight) है, जो विचार की सीमाओं से परे जाकर जीवन के वास्तविक स्वरूप का उद्घाटन करती है।

समग्र बोध का अर्थ कृष्णमूर्ति के दर्शन में जीवन के सभी आयामों—व्यक्तिगत, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक—को एक साथ समझना है। वे चेतना की ऐसी अवस्था की चर्चा करते हैं जिसमें मन किसी पूर्वाग्रह, भय या स्मृति के दबाव से मुक्त होकर वर्तमान क्षण को पूर्ण सजगता के साथ ग्रहण करता है। इस अवस्था में व्यक्ति के भीतर प्रेम, करुणा,शांति और स्वतंत्रता का विकास सहज ही होता है। इस तरह, कृष्णमूर्ति जीवन को तभी पवित्र, सार्थक और समग्र मानते हैं जब इसे जागरूकता, स्वतंत्रता और स्पष्टता के साथ जिया जाये। कृष्णमूर्ति के अनुसार जब मन विभाजन से मुक्त होता है, तभी वास्तविक परिवर्तन संभव होता है।

यह शोध आलेख इस तथ्य को रेखांकित करता है कि कृष्णमूर्ति का समग्र जीवन-दर्शन केवल दार्शनिक विमर्श नहीं, बल्कि मानव जीवन के वास्तविक रूपांतरण का आधार है। उनका चिंतन आधुनिक समाज में बढ़ती मानसिक अशांति, हिंसा और अस्तित्वगत संकट के समाधान की दिशा में गहन प्रासंगिकता रखता है। इस प्रकार कृष्णमूर्ति की जीवन के समग्र बोध की अवधारणा मानव चेतना के विकास और आंतरिक स्वतंत्रता की दिशा में एक रूपांतरणकारी अंतर्दृष्टि प्रदान करती है।

मुख्य शब्द: समग्र बोध, अंतर्दृष्टि, चेतना, आत्म-अवलोकन, स्वतंत्रता, चुनावरहित सजगता, संस्कारबद्धता।

[1] असिस्टेंट प्रोफेसर (सीनियर स्केल), दर्शनशास्त्र विभाग, बलि राम भगत कॉलेज, समस्तीपुर, बिहार

✉ डॉ० हरि नारायण, E-mail: harineelu1891@gmail.com

प्रस्तावना

मनुष्य का सबसे मूल प्रश्न है— *"मैं क्यों हूँ?"* और *"मेरे जीवन का अर्थ क्या है?"*। सभी सभ्यताओं में इस प्रश्न के उत्तर खोजे गए हैं। धर्म इसे मोक्ष या ईश्वर-प्राप्ति से जोड़ता है, नैतिक दर्शन कर्तव्य से और आधुनिक दर्शन स्वतंत्रता से। परंतु जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार जीवन की सार्थकता किसी भी बाह्य उद्देश्य में नहीं बल्कि मनुष्य की चेतना की गहन समझ में निहित है (Krishnamurti, 1969)। वे कहते हैं, "जीवन का महत्त्व क्या है? हम जीवित क्यों हैं, क्यों संघर्ष कर रहे हैं?यदि हम मात्र कोई विशेष योग्यता पाने के लिए, अच्छी नौकरी पाने के लिए, अधिक कार्यकुशल होने के लिए, दूसरों पर अधिकाधिक आधिपत्य जमाने के लिए शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं तो हमारा जीवन छिछला और खोखला होगा। यदि हम केवल वैज्ञानिक बनने के लिए, पुस्तकों में लीन विद्वान होने के लिए या ज्ञान के व्यसन में पड़ा कोई विशेषज्ञ बनने के लिए शिक्षित हो रहे हैं तो हम विश्व में विनाश और दुःख ही लाएंगे"।[1]

आधुनिक समाज में मनुष्य भौतिक उपलब्धियों, प्रतिस्पर्धा एवं सामाजिक मान्यता को ही जीवन की सफलता मानने लगा है। इससे अस्तित्वगत शून्यता और मानसिक तनाव बढ़ रहा है। ऐसे समय में कृष्णमूर्ति का दर्शन जीवन को वास्तविक दृष्टिकोण से समझने में सहायक बनता है।

जीवन की पारंपरिक अवधारणाएँ और जे. कृष्णमूर्ति

धार्मिक परंपराओं में जीवन का अर्थ आत्मा की मुक्ति या ईश्वर से मिलन माना गया है। हिंदू दर्शन में मोक्ष, बौद्ध दर्शन में निर्वाण और ईसाई धर्म में ईश्वर की कृपा जीवन की सार्थकता का लक्ष्य है। ये सभी दृष्टिकोण भविष्य-केन्द्रित हैं। अस्तित्ववादी दर्शन इसके विपरीत मानता है कि जीवन का कोई पूर्वनिर्धारित अर्थ नहीं होता; मनुष्य स्वयं उसे रचता है (Sartre, 2007)। परंतु कृष्णमूर्ति इससे भी आगे जाकर कहते हैं कि अर्थ को सोचकर बनाया नहीं जा सकता, वह केवल गहन जागरूकता से देखा जा सकता है (Krishnamurti, 1973)। वे कहते हैं, "अपनी वर्तमान सभ्यता में जीवन को हमने इतने अधिक विभागों में बांट दिया है कि शिक्षा का इससे अधिक और कोई अर्थ नहीं रह गया कि उससे केवल हम कोई विशेष तकनीक या व्यवसाय सीख लें। व्यक्ति की समन्वित प्रज्ञा को जागृत करने के स्थान पर शिक्षा उसे किसी सांचे के अनुरूप बनने के लिए प्रोत्साहित करती है और इस प्रकार स्वयं को एक समग्र प्रक्रिया के रूप में देखने-समझने में बाधक बनती है। अस्तित्व की अनेक समस्याओं का उनके अपने-अपने स्तरों पर ही समाधान करने का प्रयत्न करना, मानो वे भिन्न-भिन्न वर्ग-कोटियों में बंटी हुई हों, इस तथ्य की ओर इशारा है कि हमने उन्हें बिलकुल समझा ही नहीं है"।[2]

इस प्रकार कृष्णमूर्ति के अनुसार पारंपरिक अवधारणाओं और विचारों के आधार पर हम जीवन का जो स्वरूप समझते हैं, वह बहुत सतही होता है और इस स्तर पर जीवन जीने से हमें कभी भी जड़ों से पोषण नहीं मिल सकता, जिसके कारण हम कभी भी गहन रूप से संतुष्ट,संतृप्त और शांत नहीं हो पाते। वे आगे कहते हैं, "जीवन का गहन और व्यापक तात्पर्य है अवश्य, लेकिन यदि हम इस तात्पर्य को कभी खोजते ही नहीं तो हमारी शिक्षा किस काम की? हम बहुत अधिक शिक्षित हो सकते हैं परंतु यदि हमारे विचार और भावनाओं में गहरा समन्वय नहीं है तो हमारा जीवन अपूर्ण एवं अंतर्विरोधी होगा तथा हम भय से पीड़ित होंगे और जब तक शिक्षा जीवन के प्रति इस समन्वित दृष्टिकोण को नहीं विकसित करती,उसका महत्व न के बराबर है।"[3]

जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार जीवन का तात्पर्य

कृष्णमूर्ति ने जीवन सत्य की खोज में किसी भी धार्मिक संस्था या गुरु-परंपरा पर निर्भरता को अस्वीकार किया। वे कहते हैं कि सत्य किसी मार्ग या संगठन में नहीं पाया जा सकता (Krishnamurti, 1969)। उनके अनुसार मनुष्य अपने संस्कारों, परंपराओं और विचारों से बंधा हुआ है और यही बंधन उसे सत्य से दूर रखता है। जीवन की समग्रता तब प्रकट होती है जब मनुष्य अपने मन को बिना किसी पूर्वाग्रह के देखता है। आत्म-निरीक्षण ही वास्तविक आध्यात्मिकता है। लेकिन यह निरीक्षण तथाकथित वैचारिक नहीं है, इसमें कोई चुनाव नहीं है, इसमें कोई मूल्यांकन नहीं है,यह विशुद्ध निरीक्षण है।

कृष्णमूर्ति के अनुसार चेतना केवल विचारों का समूह नहीं बल्कि अनुभवों की पूरी संरचना है—भय, स्मृति, सुख, दुःख, इच्छा और समय (Krishnamurti, 1973)। जब मनुष्य अपनी चेतना को बिना प्रतिक्रिया के देखता है, तब उसमें परिवर्तन होता है। वे कहते हैं, "ज़िंदगी एक अद्भुत रहस्य है—किताबों में लिखा रहस्य नहीं, न ही वो रहस्य जिसके बारे में लोग बात करते हैं, बल्कि एक ऐसा रहस्य है जिसे व्यक्ति को खुद ही खोजना होता है; और इसीलिए यह इतना गंभीर मामला है कि आपको क्षुद्र, संकीर्ण और तुच्छ चीज़ों को समझना चाहिए और उनसे आगे बढ़ना चाहिए"।[4]

कृष्णमूर्ति जीवन के अर्थ के बारे में स्पष्ट करते हैं, "आप यह प्रश्न क्यों पूछ रहे हैं? जीवन का अर्थ, जीवन का उद्देश्य आपको बताने के लिए मुझे आप क्यों कह रहे हैं? जीवन से हमारा क्या अभिप्राय है? क्या जीवन का कोई अर्थ, कोई उद्देश्य है? क्या जीवन अपने आप में ही अपना अभिप्राय,अपना उद्देश्य नहीं है? हम उससे और अधिक क्यों चाहते हैं? क्योंकि हम अपने जीवन से इतने असंतुष्ट हैं, हमारा जीवन इतना खोखला,इतना बेढंगा,इतना नीरस है बार-बार वही कुछ करते रहना, इसलिए अब हमें कुछ और भी चाहिए जो हम कर रहे हैं उसके परे कुछ और"।[5]

इस प्रकार जीवन के वर्तमान तथ्य को न समझकर उससे भागना ही वास्तविक जीवन से भागना है। जब हम अपने जीवन को, वह जैसा भी है,जो भी है, उसी रूप में बिना किसी पूर्वाग्रह, निर्णय या तुलना के देख लेते हैं तो इसे देखते ही हम समग्र जीवन में प्रतिष्ठित हो जाते हैं। कृष्णमूर्ति इसे सम्यक अवलोकन या चुनावरहित सजगता कहते हैं। अन्य सारे उपाय आपको वास्तविक जीवन से दूर ले जाते हैं, जिसका प्रतिफल विभाजन और संघर्ष है। सम्यक अवलोकन से ही किसी चीज की वास्तविकता पूरी तरह स्पष्ट होती है, अन्य सभी व्याख्याएं हमारी मनोरचना होती हैं। कृष्णमूर्ति के अनुसार इस तरह का सम्यक या समग्र अवलोकन कठिन अवश्य है पर असंभव नहीं। कठिन इसलिए है क्योंकि हम नहीं जानते कि उतावले हुए बिना जीवन का निरीक्षण कैसे किया जाता है, हम तुरंत पक्ष या विपक्ष में निर्णय लेने लगते हैं, हम जीवन को स्वयं अपनी कहानी नहीं कहने देते बल्कि हम उसके विषय में अपनी व्याख्या प्रस्तुत करने लगते हैं। हमें बिना कोई निर्णय लिए,बिना कोई मूल्यांकन किए, निष्क्रिय रूप से 'जो भी है' उसके प्रति सजग होना है तभी जीवन समग्रता में अपने को प्रकट करता है। जब हम निर्णय या मूल्यांकन करने लगते हैं, तब हमारे मन की संस्कारबद्धता या विचार हावी हो जाते हैं जिनका संबंध भूतकाल या भविष्य से होता है, उनका वास्तविक जीवन से कोई संबंध नहीं होता है। अतः इस तरह के निर्णय, मूल्यांकन या व्याख्या हमें कभी भी वास्तविक जीवन से नहीं जोड़ सकते।

जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार जीने का अर्थ है संबंधित होना अर्थात हम हमेशा संबंधों में जीते हैं। यह एक वास्तविकता है। हमें इन संबंधों में ही जीवन का सम्यक अवलोकन करना है, इन संबंधों से हमें पलायन नहीं करना है, न ही इन्हें तत्काल बदलने का प्रयास करना है। यह संबंध एक दर्पण है जिसमें हम स्वयं को जिस रूप में हम हैं... भयभीत, लोभी, निर्भर, महत्वाकांक्षी.. उसी रूप में देख सकते हैं। जब हम इस तरह देखते हैं तो पाते हैं कि हमारा आपसी संबंध सीधा नहीं है, बल्कि छवियों के माध्यम से है। हम अपनी और दूसरों की एक काल्पनिक छवि (मैं और अन्य) बनाते हैं और उसी के माध्यम से एक दूसरे से संबंधित होते हैं। यह छवि हम अपनी संस्कारबद्धता या विचारों के आधार पर निर्मित करते हैं। यही छवि विभाजन,संघर्ष पैदा करती है और हम सतही जीवन जीने को अभिशप्त हो जाते हैं। जब हम इसका सम्यक अवलोकन करते हैं, तब हम वास्तविक संबंध को समझ पाते हैं। वास्तविक संबंध में हम एक दूसरे से सीधे संबंधित होते हैं, बिना किसी छवि के। तब प्रेम का जन्म होता है और इस प्रेम में ही जीवन की समग्रता है।

उनके अनुसार जीवन कोई लक्ष्य नहीं है जिसे प्राप्त करना है,बल्कि प्रतिक्षण संपूर्णता, समग्रता में जीना ही जीवन है। जब हम जीवन को लक्ष्य बना लेते हैं, तब हम जीवन की सार्थकता खो देते हैं क्योंकि तब हम समग्रता में नहीं जी रहे होते हैं क्योंकि तब एक तरफ हम होते हैं और दूसरी तरफ जीवन का लक्ष्य। फिर दोनों में संघर्ष चलता रहता है और हम कभी समग्रता में जी नहीं पाते। अतः जीवन का अर्थ या तात्पर्य दूसरा कुछ नहीं बल्कि जीवन ही है। जीवन केवल वर्तमान क्षण में है, अभी है, इसे भूतकाल या भविष्य में नहीं समझा जा सकता है। यह प्रतिपल गतिमान है, इसे विचारों से नहीं समझा जा सकता क्योंकि विचार हमेशा भूत या भविष्य के होते हैं। अतः जीवन की सार्थकता हर प्रकार की संस्कारबद्धता, भय और आत्मकेंद्रितता से मुक्त होकर वर्तमान क्षण में पूर्णता से जीने में ही है। वास्तविक जीना वही है जो किसी भी सत्ता या धारणा के प्रति अनुरूपता, भय, विचार, स्मृति, कल्पना, परंपरा,गुरुडम आदि से पूरी तरह मुक्त हो।

यही प्रामाणिक जीवन है। वे इसे और स्पष्ट करते हैं, "निस्संदेह जो समृद्ध जीवन जी रहा है, चीजों को ठीक वैसा देख रहा है जैसी कि वे हैं और जो कुछ उसके पास है उससे संतुष्ट है, वह भ्रांत नहीं है, किसी उलझन में नहीं है, वह स्पष्ट है, इसलिए वह नहीं पूछता कि जीवन का उद्देश्य क्या है। उसके लिए जीना ही आरंभ है और अंत भी"।[6]

इस प्रकार कृष्णमूर्ति के अनुसार जीवन तब समग्र और सार्थक बनता है जब मनुष्य वर्तमान क्षण में पूर्ण रूप से जागरूक होता है। अतीत की स्मृतियाँ और भविष्य की आकांक्षाएँ जीवन को विकृत करती हैं।

जीवन का समग्र बोध : चुनावरहित सजगता और ध्यान

कृष्णमूर्ति का ध्यान किसी तकनीक या अभ्यास पर आधारित नहीं है। वे कहते हैं कि ध्यान वह स्थिति है जिसमें मन पूर्ण रूप से शांत और सतर्क होता है (Krishnamurti, 1987)। यह स्थिति किसी प्रयास से नहीं आती बल्कि समझ से उत्पन्न होती है। वे कहते हैं, "तीन बातें हैं जिन्हें हमें समझना चाहिए—**एकाग्रता (Concentration), चुनावरहित सजगता (Choiceless Awareness) और ध्यान (Attention)**।एकाग्रता में प्रतिरोध होता है—किसी एक विशेष चीज़ पर एकाग्र होना, जैसे उस पृष्ठ पर जिसे आप पढ़ रहे हैं, या उस वाक्य पर जिसे आप समझने की कोशिश कर रहे हैं; यानी अपनी सारी ऊर्जा को एक ही दिशा में लगा देना। यह एक बात है। मुझे इस पर अधिक विस्तार करने की आवश्यकता नहीं है। उस एकाग्रता में प्रतिरोध होता है और इसलिए प्रयास और विभाजन भी होता है। मैं किसी चीज़ पर एकाग्र होना चाहता हूँ, लेकिन विचार कहीं और चला जाता है, और मैं उसे वापस खींच लाता हूँ—यह संघर्ष है। और यदि आप किसी चीज़ से प्रेम करते हैं तो आप बहुत सहजता से एकाग्र हो जाते हैं। 'एकाग्र होना' शब्द में यह सब निहित है—अपने मन को किसी एक वस्तु, किसी एक चित्र या किसी एक क्रिया पर केंद्रित कर देना। यह एक बात हुई। **चुनावरहित सजगता** का अर्थ है बाहर की दुनिया को और भीतर की अवस्था को बिना किसी चुनाव के जानना—सिर्फ सजग होना। रंगों के प्रति, तंबू के प्रति, पेड़ों के, पहाड़ों के, प्रकृति के प्रति—सिर्फ सजग होना। यह न कहना कि 'मुझे यह पसंद है', 'मुझे वह पसंद नहीं है', या 'मैं यह चाहता हूँ', 'मैं वह नहीं चाहता'। बिना चुनाव के देखना। अर्थात **द्रष्टा के बिना देखना**। द्रष्टा अतीत है, जो संस्कारबद्ध (conditioned) है; इसलिए वह हमेशा उसी संस्कारबद्ध दृष्टिकोण से देखता है, और तभी पसंद–नापसंद, मेरी जाति–तुम्हारी जाति, मेरा ईश्वर–तुम्हारा ईश्वर, ये सब पैदा होते हैं। हम कह रहे हैं कि सजग होना मतलब है अपने चारों ओर के पूरे वातावरण को देखना—पहाड़, पेड़, बदसूरत दीवारें, शहर—बस देखना। और उस देखने में कोई निर्णय नहीं, कोई इच्छा नहीं, कोई चुनाव नहीं होता। समझ रहे हैं? और तीसरी बात है **ध्यान (Attention)**—एकाग्रता, चुनावरहित सजगता और ध्यान। **ध्यान में कोई केंद्र नहीं होता।** आप पूरी तरह ध्यान दे रहे होते हैं। क्या आप अभी—यदि मैं पूछूँ—जो कहा जा रहा है, उस पर पूरी तरह ध्यान दे रहे हैं? यदि आप संपूर्ण रूप से ध्यान दे रहे हैं, तो 'आप' जो ध्यान दे रहा है, वह नहीं होता—है न? यदि आप पूरे हृदय और पूरे अस्तित्व से सुन रहे हैं, तो 'मैं सुन रहा हूँ' ऐसा कोई 'मैं' नहीं रहता। तब ध्यान असीम हो जाता है। इसलिए ध्यान में पूर्ण विस्तार (space) होता है।"[7]

इस प्रकार चुनावरहित सजगता, सजगता का सबसे मौलिक आयाम है जो निष्क्रिय है लेकिन पूरी तरह सजग है और यह ध्यान के लिए आधारभूमि तैयार करता है। ध्यान (attention) इसी सजगता का सक्रिय रूप है (अखंडित/समग्र/सघन ऊर्जा की स्थिति), लेकिन इसका कोई केंद्र नहीं होता है। यह पूर्ण सजगता की अवस्था है। यह ध्यान कोई विधि या तकनीक नहीं है जिसे करना होता है, बल्कि होने की एक अवस्था है (a state of being)। यह सहज है, प्रयास रहित है। इस अवस्था में समग्र/पूर्ण/शुद्ध अवलोकन (total observation) घटित होता है। कृष्णमूर्ति के अनुसार स्वतंत्रता किसी राजनीतिक या सामाजिक अधिकार से नहीं आती, बल्कि मानसिक बंधनों से मुक्ति से आती है (Krishnamurti, 1969)। जब व्यक्ति भय, तुलना और प्रतिस्पर्धा से मुक्त होता है तभी वह रचनात्मक और प्रेमपूर्ण जीवन जी सकता है। यही स्वतंत्रता और जागरूकता जीवन के सार्थकता की कुंजी है। कार्ल रोजर्स ने कहा कि जीवन की सार्थकता self-actualization में है—अर्थात् स्वयं को पूर्ण रूप से विकसित करना (Rogers, 1961)। कृष्णमूर्ति भी कहते हैं कि मनुष्य को अपने वास्तविक स्वरूप को समझना चाहिए, न कि समाज द्वारा बनाए गए आदर्शों का पीछा करना चाहिए।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन और विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि जे. कृष्णमूर्ति के अनुसार जीवन की सार्थकता किसी लक्ष्य को प्राप्त करने में नहीं, बल्कि जीवन को पूरी जागरूकता (समग्रता) के साथ जीने में है। जब मनुष्य बिना भय, बिना भ्रम और बिना मानसिक बंधनों के जीता है, तब जीवन अपने आप समग्र और अर्थपूर्ण हो जाता है। उनका दर्शन हमें यह सिखाता है कि सत्य, प्रेम और स्वतंत्रता जीवन के बाह्य ढाँचे में नहीं, बल्कि हमारी चेतना की गहराई में स्थित हैं। उनकी दृष्टि में केवल सामाजिक मानदंडों के अनुसार, धार्मिक मान्यताओं के अनुसार, परंपरा के अनुसार या महत्वाकांक्षाओं से प्रेरित जीवन जीना वास्तविक (समग्र) जीवन नहीं है, इसमें शांति, आनंद, तृप्ति और प्रेम के फूल नहीं खिल सकते। ऐसे जीवन में विखंडन, अशांति और संघर्ष अपरिहार्य है और यह संघर्ष व्यक्ति के जीवन के साथ-साथ पूरी दुनिया में संकट को आमंत्रित करता है। आज का मनुष्य उपभोक्तावाद, प्रतिस्पर्धा,संघर्ष और विभिन्न विकृतियों में बुरी तरह उलझा हुआ है। इससे चिंता और अवसाद बढ़ रहा है। कृष्णमूर्ति का दर्शन हमें विभिन्न आंतरिक और बाह्य आडंबरों, भ्रमों से हटाकर जीवन को समग्रता में जीने की अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। उनके अनुसार जीवन को समग्रता में जीना ही हमें वास्तविक आंतरिक शांति की ओर ले जाता है। वर्तमान परिदृश्य में, जीवन के संबंध में उनकी यह अंतर्दृष्टि, मानसिक स्वास्थ्य, आत्म-समझ और सार्थक, सृजनात्मक जीवन की समझ विकसित करने के लिए अत्यंत प्रासंगिक है।

संदर्भ:

1. कृष्णमूर्ति, जे. (2005), शिक्षा एवं जीवन का तात्पर्य (अनु. डी. एस. वर्मा), राजघाट, वाराणसी, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, पृष्ठ 2.
2. वही, पृष्ठ 3.
3. वही, पृष्ठ 2-3.
4. Krishnamurti, J. (1964), Think on These things (ebook), ch. 6 (the wholeness of life), Krishnamurti Foundation America, p. 32. https://www.theosophy.world/sites/default/files/ebooks/Krishnamurti%20-%20Think%20on%20These%20Things.pdf
5. कृष्णमूर्ति, जे. (2008), प्रथम और अंतिम मुक्ति, दिल्ली, राजपाल एंड संस, पृष्ठ 223.
6. वही, पृष्ठ 223-224.
7. https://theimmeasurable.org/choiceless-awareness-krishnamurti

Works cited:

Krishnamurti, J. (1969). *Freedom from the known*. Harper & Row.

Krishnamurti, J. (1973). *The awakening of intelligence*. Harper & Row.

Krishnamurti, J. (1987). *Commentaries on living* (Vols. 1–3). Harper & Row.

Rogers, C. R. (1961). *On becoming a person: A therapist's view of psychotherapy*. Houghton Mifflin.

Sartre, J. P. (2007). *Existentialism is a humanism* (C. Macomber, Trans.). Yale University Press. (Original work published 1946)